साधना की शुरुआत

ओशो फ्रैगरैंस

श्री रजनीश ध्यान मंदिर, कुमाशपुर–दीपालपुर रोड
जिलाः सोनीपत, हरियाणा 131021

contact@oshofragrance.org
www.oshofragrance.org

Rajneeshfragrance

+91-7988229565
+91-7988969660
+91-7015800931

साधना की शुरुआत

साधना कहाँ करनी चाहिए?

साधना सबसे अच्छी तो अपने घर में ही होती है। किन्तु शुरुआत में सीखने के लिए बेहतर हो कि हम किसी आश्रम में जहाँ गुरु का सानिध्य प्राप्त है, जहाँ साधकों का संघ बहुत से मित्र हैं, सब एक दिशा में चल रहे हैं वहाँ पर उपयोगी होगा। आपके मन में कोई प्रश्न आया आप पूछ सकते हैं। कोई आपसे दो कदम आगे है। वह आपको कोई सलाह दे सकता है। उसकी सलाह काम आ जाएगी। हॉस्टल में आप रह रहे हैं पढ़ाई के लिए, आपसे कोई सीनियर है एक क्लास आपसे आगे है, आपसे कोई गणित नहीं बन रहा आपके सीनियर

मित्र आपकी मदद कर देंगे। आप किसी के काम आ जाएंगे। कोई आपसे जूनियर है। मिलजुल कर जब हम चलेंगे तो रास्ता आसान हो जाएगा। फिर हर चीज का एक माहौल बनता है। शराब घर में शराबी इकट्ठे होते हैं तो एक खास माहौल में बिना शराब पीए भी चढ़ जाएगी नए आदमी को। अस्पताल का एक खास माहौल है। बीमार भर्ती हैं, आप वहाँ किसी से मिलने जाते हैं आप भी थके मांदे लौटते हैं। जैसे आपकी ऊर्जा चूस ली गई हो। वहाँ एक खास वातावरण था। ठीक इसी प्रकार हम जिनको तीर्थ स्थान कहते हैं, साधना स्थल कहते हैं वे विशेष प्रकार की ऊर्जा से चार्जड आविष्ट स्थान हैं। वहाँ पर एक खास दिशा में यात्रा करना सरल होगा। लेकिन याद रखना, ये तो शुरुआत के सबक, बाद में तो अपने घर में, अपने एकान्त में ही साधना करनी है। तो शुरुआत के लिए उपयोगी है। निश्चित रूप से समझदार व्यक्ति को हर चीज का उपयोग कर लेना चाहिए। कहीं से कोई मदद हमें मिलती हो तो हम उसको ले लें। फिर हम अपने बलबूते चलें। जैसे छोटा बच्चा माँ की उंगली

पकड़ कर चलता है। सहारा तो मिल जाता है। उसे विश्वास है कि माँ उंगली पकड़े है गिरने नहीं देगी, हिम्मत करता है खड़े होने की, चलना शुरू करता है। फिर धीरे-धीरे माँ अपनी उंगली छुड़ाने लगती है। अब तुम अपने पैर से खुद चलो। किसी ने आपको तैरना सिखाया हो तो आपको याद हो कि तैरना सिखाने वाला क्या करता है। कुछ खास नहीं करता। वह नदी या स्वीमिंग पुल के किनारे ले जाकर कहता है कि उतरो पानी में। हाथ-पाँव चलाओ मैं खड़ा हूँ यहाँ पर। अगर कोई समस्या होगी तो मैं छलाँग लगाकर तुरन्त आपकी मदद करूँगा। उसके खड़े होने से हमको विश्वास हो जाता है। जरूरत शायद कभी नहीं पड़ती। हम खुद पानी में उतरते हैं हाथ-पैर फड़फड़ाते हैं शुरुआत में। उल्टा सीधा हाथ-पैर फैंकते हैं। दो-चार दिन में जरा तरकीब से तैरना सीख जाते हैं। लेकिन एक व्यक्ति खड़ा है किनारे। उस पर हमें श्रद्धा है। उसका खड़ा होना बड़ा काम आता है। वर्ना हमारी हिम्मत ही न पड़ती पानी में

उतरने की। ठीक ऐसे ही गुरु का काम है, ठीक ऐसे ही आश्रम का काम है, ठीक ऐसे ही साधक संघ का, मित्रों का काम है। उनकी उपस्थिति हमारे लिए प्रोत्साहन बन जाती है। करना कुछ नहीं पड़ता किसी को, करते सब कुछ आप ही हैं लेकिन उनकी मौजूदगी में बात आसान हो जाती है। अकेले में कठिन हो जाएगी। हाँ, मुश्किल क्या हो होती है, जब आपको तैरना सीखते-सीखते दस दिन बीत गए और फिर भी आप कहो अपने शिक्षक से कि वहां खड़े रहो किनारे तभी तैरेंगे यह फिर गलती हो गई। अब आपने तैरना सीख लिया। अब अकेले तैरो। शिक्षक का काम पूरा हुआ। ठीक इसी प्रकार आध्यात्मिक गुरु का काम होता है। शुरुआत में थोड़ी सी मदद और मदद भी कुछ ज्यादा नहीं बस, भरोसा। उसके भरोसे तुम तैरने लगोगे, ध्यान में डूबने लगोगे। फिर गुरु धीरे-धीरे अपना हाथ छुड़ा लेगा। वह कहेगा बॉय-बॉय। अब तुम खुद डूबो, अपनी यात्रा स्वयं करो।

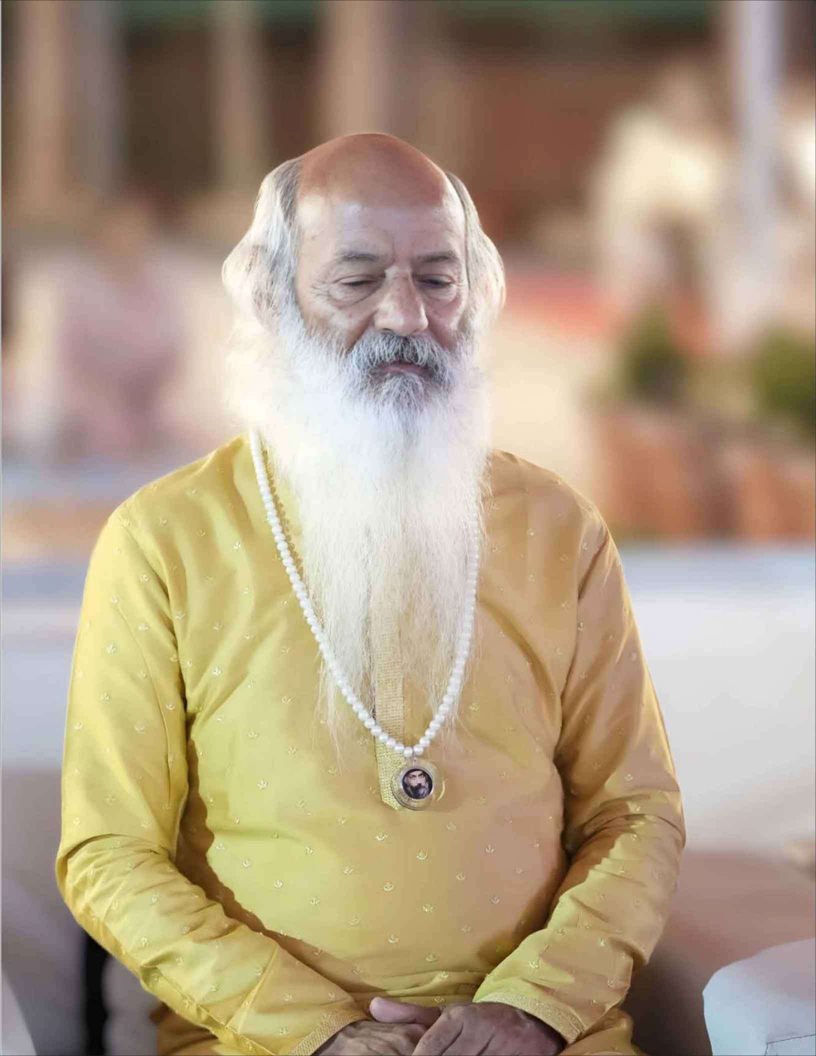

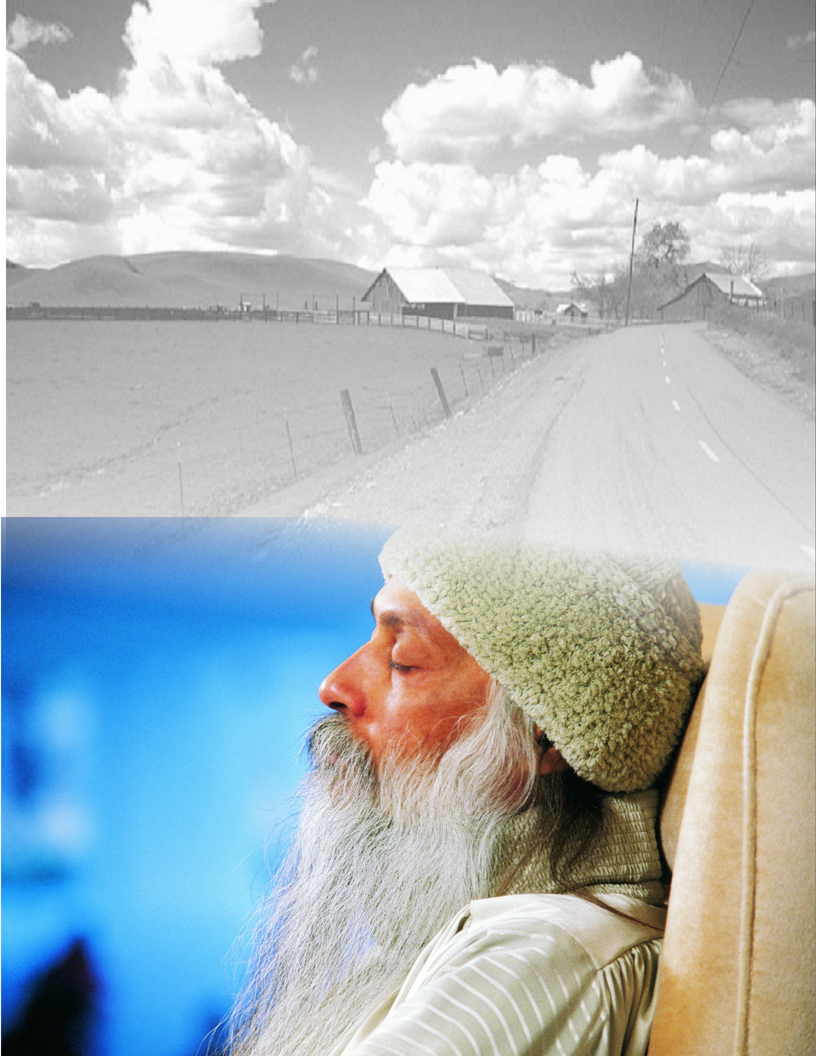

प्रश्न- आध्यात्मिक जगत में ऐसी कौन-सी कमियाँ हैं या रास्ते में मिलने वाली खामियाँ हैं जो हमें भटकाव और धर्म से दूर करती हैं?

सबसे बड़ी जो भूल है, वह यह है कि हमारा लक्ष्य हमसे कहीं दूर है। भटकने का सबसे बड़ा कारण। हम स्वयं ही स्वयं के लक्ष्य हैं। ओशो का एक वचन मुझे याद आता है– 'धन्य हैं वे जो स्वयं को खोजते, स्वयं को पाते और स्वयं ही हो जाते। फिर से रिपीट कर दूँ। गौर से सुनना, ओशो कहते हैं– 'धन्य हैं वे जो स्वयं को खोजते, स्वयं को पाते और स्वयं ही हो जाते।' सारी आध्यात्मिक

यात्रा का लक्ष्य बस यही है। अपने स्वभाव को उघाड़ना। वह जो हमने परिवार से, समाज से, शिक्षा से, दुनिया से जो हमने सीख लिया है। जो पर्त हमारे ऊपर जम गई है शिक्षा की, संस्कारों की उसे हटाना। अपने वास्तविक स्वरूप को पहचानना। इसलिए भटकाव क्या हो सकता है?भटकाव यह हो सकता है कि हम सदा बाहर से मिलने वाली सूचनाओं का इकट्ठा करते रहे। हम अपने लक्ष्य को कुछ और समझें। हम किसी को आदर्श बना लें। हम उसके जैसे होने की कोशिश करें। यह बड़े से बड़ा भटकाव का कारण है। आप ही अपने आदर्श हो कोई और नहीं। आपको राम या कृष्ण जैसा नहीं बनना है, न आपको गांधी या विनोवा जैसा बनना है, न आपको विवेकानन्द बनना है, न आपको ओशो बनना है। आपको स्वयं होना है। दुनिया में कोई भी आपके लिए अनुसरणीय नहीं है। सबकी बात समझना, सुनना, गुनना। क्योंकि उनकी बात हमारे उपयोग की होगी। लेकिन उनकी नकल मत करना।

पश्चिम का एक बहुत बड़ा विचारक हुआ हर्मन हैश। उसकी लिखी हुई बड़ी प्रसिद्ध किताब है- 'सिद्धार्थ' शायद आप लोगों ने पढ़ी होगी। भारत में एक फिल्म भी बनी थी अंग्रेजी में। शशि कपूर ने उसमें सिद्धार्थ का रोल अदा किया था। शायद आपने देखी हो। उसकी कहानी का छोटा-सा हिस्सा आपको कहूँ। उससे समझ में आएगी मेरी बात। 'दो मित्र रहते हैं एक का नाम सिद्धार्थ है, एक उसका दोस्त है। उन दोनों के मन में धर्म की प्यास पैदा होती है। गौतम बुद्ध के जमाने की कहानी है। ढ़ाई हजार साल पुरानी। वे दोनों गौतम बुद्ध के पास जाते हैं। बुद्ध के प्रवचन सुनते हैं। बुद्ध की शिक्षा यही थी- अप द्वीपो भव। अपने दीपक स्वयं बनो। सिद्धार्थ का जो मित्र रहता है, वह बुद्ध का भिक्षु बन जाता है। सिद्धार्थ जाता है गौतम बुद्ध के पास, धन्यवाद देकर उनके चरण स्पर्श करता है और कहता है कि धन्यवाद प्रभु! आपने मुझे रास्ता बताया। अब मैं जाता हूँ

आपसे दूर क्योंकि आपने अपने अनुभवों से जो देशना हमें दी, उससे मैं समझ गया कि किसी की भी नकल करने की जरूरत नहीं है। आपने स्वयं अपना मार्ग खोजा। इससे स्पष्ट हो गया कि मुझे भी अपना मार्ग खुद ही खोजना होगा। धन्यवाद देकर सिद्धार्थ वहाँ से विदा हो जाता है। फिर वह संसार में आता। घर-गृहस्थी में जीता। फिर एक दिन एक मांझी से मुलाकात होती है नदी किनारे; वह नाव चलाने का काम करता था। सिद्धार्थ भी वहीं रूक जाता है, उस नाविक की मदद करने लगता है। कुछ खास काम नहीं रहता। दिन में दो चार ग्राहक आते हैं, जिनको नाव में इस पार से उस पार ले जाना होता है। वहीं नदी के किनारे एकांत झोपड़े में वह मांझी रहता है। सिद्धार्थ भी वहीं रहता है। कुछ ज्यादा बात-चीत भी उनकी नहीं होती। खाली समय है, नदी के किनारे बैठ कर नदी की आवाज सुनता है। नदी का निरीक्षण करता है। कुछ और करने को वहाँ है भी

नहीं। कहानी के अंत में बड़ा अद्भुत मोड़ आता है। सिद्धार्थ नाविक का काम करते-करते नदी के किनारे फुर्सत में बैठे-बैठे उस एकान्त स्थल पर परम ज्ञान को प्राप्त कर लेता है और उसका मित्र जो बुद्ध का भिक्षु बन गया था, वह कभी ज्ञान को प्राप्त नहीं कर पाता। उसने बुद्ध को अपना आदर्श बना लिया। वह बुद्ध की नकल में पड़ गया। और बुद्ध का जीवन इस बात का प्रमाण है कि उन्होंने स्वयं किसी के द्वारा नहीं पाया। उन्होंने स्वयं अपने विवेक से पाया। जब तक वे दूसरों की नकल करते रहे छः साल तक, तब तक उनको ज्ञान न मिला।

ठीक वही बात मैं आपसे कहना चाहता हूँ। आपने पूछा है कि धर्म के जगत् में सबसे बड़ा भटकने का कारण?सबसे बड़ा कारण है आदर्श। हम सोचते हैं किसी और जैसा हमको होना है। कमल का फूल अगर सोचने लगे कि मुझे गुलाब जैसा होना है, इस कोशिश में

वह गुलाब तो नहीं हो पायेगा। लेकिन कमल होने से भी चूक जाएगा। पूरा इतिहास गवाह है। आज तक दो बुद्धपुरूष एक से नहीं हुए। गौतम बुद्ध, महावीर से बिल्कुल भिन्न हैं। महावीर कृष्ण से बिल्कुल अलग हैं। कृष्ण का जीवन और राम का जीवन कोई समानता नहीं है। राम और ईसामसीह उतने ही भिन्न हैं जितना जमीन और आसमान। कहाँ कबीर साहब, कहाँ गुरु नानक देव कोई तालमेल नहीं है। उनकी जीवन शैली बिल्कुल अलग-अलग है। आजतक जितने भी परम ज्ञानी हुए हैं, उनमें कोई भी समानता खोजना मुश्किल है। अर्थात् किसी ने भी किसी की नकल नहीं की। सबने स्वयं होने की कोशिश की। यही उनकी खूबी है। उनसे यही सीखना। इसलिए आपने पूछा है कि धर्म के रास्ते में भटकाने वाला सबसे बड़ा कारण? सबसे बड़ा कारण यही है कि हम अपने मन में किसी आदर्श को स्थापित कर लेते हैं। हम उसकी नकल करने की कोशिश करते

हैं और बुरी तरह भटक जाते हैं। हमें पहुँचना था अपने घर, हम पहुँच जाते है कहीं और। अनुयायी हमेशा कहीं और पहुँचता है।

मैंने सुना है मुल्ला नसरूद्दीन के बारे में, बड़ा शराबी था। एक रात बारह बजे शराब घर से बाहर निकला नशे में धुत, तेज तूफान आया हुआ था, भारी वर्षा हो रही थी, नसरूद्दीन ने देखा उसकी कार की हैडलाइट ऑन नहीं हो रही। कुछ कार में खराबी आ गई। वर्षा से, तूफान से अब बड़ी मुश्किल हो गई। कार में लाइट नहीं जल रही घर कैसे जाएं?उसने सोचा कोई बात नहीं, हैड लाइट नहीं जल रही, किसी दूसरी कार के पीछे उसकी लाइट में चला चलूँ। थोड़ी देर में एक कार वहां से गुजर रही थी। नसरूद्दीन ने अपनी कार उसके पीछे लगा दी। नशे में धुत कार का अनुगमन करते-करते जहाँ कार वाला मुड़े, वहीं नसरुद्दीन मुड़ता जाए। उसी की रोशनी में अपनी कार को आगे बढ़ाता

जाए। अन्त में हुआ यह कि सामने वाली कार अचानक रुकी और नसरूद्दीन ने पीछे से आकर उसको टक्कर मारी। वह आदमी सामने की कार वाला उतरा, उसने बहुत गालियाँ दीं और कहा कि तुम पागल हो क्या? देखते नहीं, मैंने कार रोकी; तुमने पीछे से आकर टक्कर मार दी। नसरुद्दीन ने कहा– पागल मैं हूँ कि तुम, तुमको कुछ ड्राइविंग के नियम–कानून कुछ पता हैं कि नहीं। कार रोकने के पहले तुमको इशारा करना था। इन्डिकेट करना था। तब कार रोकनी थी। उस आदमी ने कहा कि हद हो गई। मुझे अपने गैरेज में भी इन्डिकेटर देना पड़ेगा। यह मेरा गैरेज है, मैं अपने घर में हूँ।

बेहोश आदमी सोचता है कि मैं दूसरे की रोशनी में यात्रा कर लूँ। लेकिन याद रखना, दूसरा हो सकता है सही हो, मैं आपसे यह नहीं कह रहा हूँ कि राम गलत हैं, कि कृष्ण गलत हैं, कि बुद्ध गलत हैं। हो सकता है वे सही हों लेकिन वे अपने घर पहुँचे हैं। आप उनके पीछे चलते–चलते उनके गैरेज में पहुँच जाएंगे। आप अपने

घर नहीं पहुँच पाएंगे और पहुँचना था अपने घर। धर्म के रास्ते पर सबसे बड़ा भटकाव है- मन में आदर्श। मैं आपसे विनती करता हूँ आप अपने मन में कोई भी आदर्श न रखें। अगर अपने स्वभाव को जानना है तो सारे प्रभावों से मुक्त हो जाएं। ये स्वभाव और प्रभाव दो शब्दों को समझना। प्रभाव का अर्थ है- दूसरों से जो हमने सीखा। और स्वभाव का अर्थ है- हमारे खुद के भीतर जो है। जिसे हम लेकर ही पैदा हुए हैं। अपने स्वभाव में जाना है। अपने स्वरूप को पहचानना है। तब आत्मज्ञान घटता है। दूसरे के प्रभाव में आकर हम हमेशा भटक जाते हैं और धर्म के रास्ते पर सबसे बड़ी उलझन यही है।

FIRE

प्रश्न- एक मित्र ने पूछा है कि आस्था चैनल पर, जागरण चैनल पर प्रवचन सुनकर मैंने ध्यान लगाना शुरू कर दिया और आनन्दित रहता हूँ। साधना के पथ पर और आगे बढ़ना चाहता हूँ। किन्तु इससे घर-गृहस्थी पर तो कोई फर्क नहीं पड़ेगा। क्योंकि मुझे अपने पत्नी बच्चों का पालन पोषण करना है। वह भी मेरा धर्म है?

ओशो की शिक्षा, घर-गृहस्थी में रहते हुए, अपने सारे उत्तरदायित्व निभाते हुए ध्यान की साधना करने को कहा है। आप अगर शान्त हो जाएंगे, आनन्दित हो जाएंगे, आप प्रसन्न हो जाएंगे तो आपकी घर-गृहस्थी और सुन्दर

तरीके से चल सकेगी। पुराने संन्यास की धारणा छोड़ दो। बुद्ध और महावीर ने और शंकराचार्य ने जो संन्यास सिखाया, वह जीवन के विरोध में था। उसमें घर-गृहस्थी का त्याग करना था। मकान और ऑफिस को छोड़ना था। ओशो हमें जो सिखा रहे हैं वह बिल्कुल भिन्न बात है। ओशो कह रहे हैं- अपने घर परिवार में रहो। तुम दुकानदार हो तो तुम दुकानदार रहो। तुम जो काम करते हो, उस काम को जारी रखो। हाँ, तुम्हारे काम करने का तरीका और सुन्दर और प्रेमपूर्ण और होशपूर्ण बने। अभी तो जो परिवार है नाम मात्र को ही वहाँ प्रेम होता है। काश तुम ध्यानस्थ हो जाओ तुम्हारे भीतर से अद्‌भुत प्रेम का झरना फूटेगा। केवल आनन्दित व्यक्ति ही प्रेमपूर्ण हो सकता है। दु:खी आदमी कैसे प्रेमपूर्ण होगा। दु:खी आदमी दूसरों को भी दु:ख देता है। केवल सुखी व्यक्ति ही अपने आस-पास सुख की तरंगे फैलाता है। तुम्हारा ध्यान में डूबना, तुम्हारा सुखी और शान्त होना तुम्हारे आस-पास के लोगों के लिए बड़ा

उपयोगी साबित होगा। तब तुम अपनी पत्नी को, अपने बच्चों को सही प्रेम कर पाओगे। जब तुम गुरु के प्रति श्रद्धा से भर गए। तब केवल गुरु के प्रति ही नहीं, तुम अपने माता-पिता के प्रति भी बड़े आदर और सम्मान से भर पाओगे। अभी तो तुम सिर्फ कर्त्तव्य, ड्यूटी निभा रहे हो। फिर तुम सचमुच में माता-पिता की सेवा कर पाओगे। फिर वह सेवा तुम्हारे भीतर के प्रेम से उपजेगी। ड्यूटी और कर्त्तव्य नहीं होगी। अभी तुम कह रहे हो बच्चों का पालन करना तो मेरा धर्म है। यहाँ धर्म का

अर्थ है- ड्यूटी, कर्त्तव्य, उत्तरदायित्व। फिर ऐसा शब्द तुम इस्तेमाल न करोगे। तुम कहोगे परमात्मा के छोटे-छोटे रूप, बच्चों के रूप में जो मेरे घर आए हैं, मैं परमात्मा की पूजा कर रहा हूँ। फिर तुम्हें मंदिर में जाकर किसी पत्थर की मूर्ति को भोग लगाने की जरूरत नहीं। अपने बच्चों के लिए जो भोजन-पानी का तुम इंतजाम कर रहे हो; परमात्मा की ही सेवा कर रहे हो। तब तुम्हारा व्यवहार बदल जाएगा। तुम्हारा दृष्टिकोण बदलने से सारी बात बड़ी आनन्दपूर्ण हो जाएगी।

आपने पूछा है कि घर-गृहस्थी में कोई फर्क तो नहीं पड़ेगा?फर्क तो पड़ेगा लेकिन वह अच्छा पड़ेगा। आप शायद सोच रहे हैं कि घर-गृहस्थी का त्याग करना पड़ेगा। नहीं, जरा भी नहीं बल्कि घर-गृहस्थी में बड़ा आनन्द आ जाएगा। ना केवल आप सुखी होओगे, आपके कारण परिवार के अन्य लोग भी सुखी और प्रसन्न होने लगेंगे। तो ओशो के शिष्य बनना एक अलग बात है। पुराने संन्यास से इसकी तुलना मत करना। बुद्ध

के भिक्षु घर-गृहस्थी छोड़ कर चले गए। भिखारी बन गए। महावीर, शंकराचार्य इन सबने वही शिक्षा दी। जीवन का त्याग करो। इनके त्याग व संन्यासियों में कितने लोगों को आनन्द और परमात्मा मिला; यह तो कहना मुश्किल है। लेकिन इनकी वजह से कितने लोगों को दु:ख मिला, उसका हिसाब लगाओ। पुराने जमाने में संयुक्त परिवार होते थे। एक आदमी कमाने वाला होता था, पच्चीस आदमी खाने वाले होते थे। बड़े-बड़े परिवार पच्चीस-तीस चालीस लोगों के एक-एक परिवार होते थे। एक व्यक्ति का घर छोड़कर चले जाना कम से कम पच्चीस लोगों के दु:ख का कारण था। कहते हैं कि बुद्ध के पचास हजार शिष्य थे। महावीर के पचास हजार शिष्य थे। उनके जीवन काल में ही एक लाख शिष्य थे इन दो लोगों के। इन एक लाख में से कितनों को ज्ञान मिला। शायद दस-पाँच को मिला हो। कहना मुश्किल है। मगर एक लाख लोगों की वजह से कम से कम पच्चीस लाख लोगों को जीवन में दु:ख

मिला। यह तो पक्का है। कोई वृद्ध माता-पिता आशा और उम्मीद लगा कर बैठे होंगे कि मेरा बेटा बुढ़ापे में मेरी लाठी बनेगा। मेरा सहारा बनेगा और वह बेटा छोड़ कर चला गया। उसकी पत्नी रही होगी। जिसको सात फेरे लगाकर, आश्वासन देकर वह लाया था कि जिन्दगी भर तेरा ख्याल रखूँगा और अचानक पतिदेव गायब हो गए। भिक्षु बन गए। अपने पति के जिन्दा रहते-रहते उसकी पत्नी विधवा जैसी हो गई। जरा पुराने जमाने की याद करो। उस समय विधवा की क्या हालत हुआ करती। हो सकता है इसको कहीं नौकरानी बनना पड़ा हो। कहीं बर्तन माँजने पड़े हों। कहीं झाड़ू लगानी पड़ी हो। तब अपना पेट पाल पाई हो। यह जो भिक्षु बन गया उसके बच्चों का क्या हुआ?उसका हिसाब-किताब किसी शास्त्र में नहीं लिखा। अगर ये एक लाख लोग संन्यासी बनें तो इनके कम से कम पाँच लाख-छः लाख तो बच्चे रहे होंगे। वे अपने बाप के जिन्दा रहते-रहते अनाथ हो गए। किसी को हो सकता है जेब कतरा बनना

पड़ा हो, किसी को बाल मजदूरी करनी पड़ी हो, किसी को भिखारी बनना पड़ा हो। बाप मर जाता तो कम से कम फिर भी एक सन्तोष रहता। पिता जिन्दा है और बच्चों को भीख माँगनी पड़ रही है कि बाल मजदूरी करनी पड़ रही है। कितनी दु:खदायी स्थिति रही होगी।

ओशो इस प्रकार के संन्यास के सख्त खिलाफ हैं। ओशो का कहना है कि यह तो बड़ी हिंसा हो गई। यह महावीर के शिष्य कह रहे हैं 'अहिंसा परमो धर्मो' और इन्होंने अपने ही परिवार के लोगों के साथ कितनी हिंसा की है। और एक लाख की गिनती तो मैं उस समय की बता रहा हूँ बुद्ध और महावीर के जिन्दा रहते। तब से लेकर इन ढ़ाई हजार सालों में कितने करोड़-करोड़ लोग भिक्षु और मुनि बने। इनका अगर हिसाब लगाओ। तो मैं नहीं समझता हिटलर ने और सिकन्दर ने जितनी हिंसा की है, उससे कम हिंसा इन लोगों ने की। हिटलर भी और लेनिन भी और माओ भी फीके पड़ जायेंगे इनके सामने। संन्यास के नाम पर, धर्म के नाम पर जो होता रहा है, वह जरा भी धार्मिक न था। ओशो ने हमें जो

शिक्षा दी है, वह बिल्कुल अलग है। वे कह रहे हैं कि संसार में रहते हुए साधना करना है। उसे उन्होंने एक नया शब्द दिया है– 'जोरबा दी बुद्धा।' जोरबा एक ग्रीक नाटक का पात्र है। वह मैटिरिलियस्टिक भौतिकवादी व्यक्ति है और बुद्ध प्रतीक हैं अध्यात्मवाद के। जोरबा दी बुद्धा का अर्थ है संसार और संन्यास का समन्वय। धन भी कमाओ और ध्यान में भी डूबो। घर–गृहस्थी में रहो और परमात्मा को खोजो। इन दोनों में कोई विरोध नहीं है। ओशो ने स्वयं ऐसा करके दिखाया। वे हमारे लिए साक्षात प्रमाण हैं और ओशो के दस लाख शिष्य आज दुनिया में हैं जो अपनी घर–गृहस्थी में रह रहे हैं। अपने सारे उत्तरदायित्व का निर्वाह कर रहे हैं और ध्यान साधना कर रहे हैं। ये दस लाख लोग प्रमाण हैं कि ऐसा हो सकता है। परमात्मा को पाने के लिए संसार से भागने की कोई जरूरत नहीं। अगर परमात्मा को पाने के लिए संसार को छोड़ना पड़ता तो परमात्मा ने संसार बनाया क्यों?इन साधु–महात्माओं से कोई पूछे तो सही। ये जो संसार छोड़ कर भाग गए; ये परमात्मा से ज्यादा

समझदार हैं?परमात्मा ने संसार बनाया और ये छोड़ कर भाग गए। मुझे याद आता है एक पुराना फिल्मी गीत भगवती चरण वर्मा जी की फिल्म चित्रलेखा का–

संसार से भागे फिरते हो,
भगवान को तुम क्या पाओगे?
इस लोक में कुछ पा न सके,
उस लोक में भी पछताओगे।
यह भोग भी एक तपस्या है,
तुम त्याग के मारे क्या जानो।
होगा अपमान रचियेता का,
रचना को अगर ठुकराओगे।
संसार से भागे फिरते हो,
भगवान को तुम क्या पाओगे।

वे लोग जो संसार में कुछ पाने में असफल रहे, जो क्षुद्र को भी न पा सके, वे विराट परमात्मा को कैसे पाएंगे। जिनमें इतनी भी बुद्धि न थी, जिनमें इतनी भी

प्रतिभा न थी। जिनके भीतर अपने माता-पिता, पत्नी अपने बच्चों के प्रति भी प्रेम न था, वे क्या खाक भक्त होंगे? भक्त होने का अर्थ है विराट जगत से प्रेम। पूरे अस्तित्व से प्रेम। तुम अपने माता-पिता और बच्चों को प्रेम न कर पाए, अपने भाई-बहन को प्रेम न कर पाए, परमात्मा से क्या खाक प्रेम करोगे? नहीं, इसी संसार में रहना है। आपने पूछा है कि क्या घर-गृहस्थी में फर्क पड़ेगा?जरूर पड़ेगा लेकिन फर्क बेहतर का पड़ेगा। हमारे मन में जो डर बैठा है वह इसलिए क्योंकि पिछले हजारों-हजारों सालों से धार्मिक लोगों ने संसार को बहुत दु:ख दिया है। विशेषकर स्त्रियों को। स्त्रियों के मन में तो बड़ा डर समा गया। क्योंकि स्त्रियाँ तो पुरुषों पर निर्भर थीं। आज की बात छोड़ दो। आज की पढ़ी-लिखी आधुनिक स्त्री, आज से सौ साल पहले की जरा कल्पना करो। स्त्रियाँ पढ़ी लिखी न थीं, कोई काम न कर सकती थीं। राजनीति में नहीं आ सकती थीं। धन नहीं कमा सकती थीं, दुकान नहीं चला सकती थीं। घर

की चार-दीवारी के भीतर बंद, आर्थिक रूप से गुलाम। उनका पति उन्हें छोड़ कर चला जाए। उनके लिए जीते-जी मर जाने जैसा हो गया। इसलिए महिलाओं के मन में, धर्म के खिलाफ, संन्यास के खिलाफ बड़ी दहशत छाई हुई है। स्वाभाविक है ऐसा होगा ही। हजारों सालों से जिनको सबसे ज्यादा कष्ट भोगना पड़ा है; वे हैं स्त्रियाँ। पुरुष तो संन्यासी हो गए, स्वामी बन गए; लोग उनके पैर छू रहे हैं, पैरों में फूल मालाएं डाल रहे हैं। उनको तो सम्मान मिल रहा है। उनकी माँ का क्या हुआ?उनकी पत्नी का क्या हुआ?उनकी बहन का क्या हुआ? किसी ने हिसाब नहीं लगाया। इस आदमी की बेटी पर क्या गुजरी?हो सकता है उसे वैश्या बन जाना पड़ा हो, भोजन-पानी के इंतजाम के लिए। इसका हिसाब किसी ने नहीं लगाया। ओशो इस प्रकार के त्यागवाद के विरोध में हैं। उनका कहना है संसार में, घर-गृहस्थी में रह कर ही ध्यान साधना करो।

प्रश्न- मन को जीतने का कोई सरल उपाय बताएं?

आप न भी पूछते सरल; तो भी मैं सरल ही बताता। मुझे कोई कठिन काम आता भी नहीं। सब उपाय बिल्कुल सरल हैं। बड़ा सरल-सा उपाय है। मन के साक्षी बनो। मन में जो भी चल रहा है, उसको चुपचाप देखते रहो। ऐसे देखो जैसे किसी और का मन हो। जैसे टेलीविजन के स्क्रीन पर कोई कहानी चल रही हो और तुम चुपचाप बैठे देखते रहते हो। तुम्हारा उससे कुछ लेना-देना नहीं। जैसे सड़क के किनारे गुजरते हुए

ट्रैफिक को कभी देखो। कभी प्रयोग करना। पाँच मिनट सड़क के किनारे खड़े हो जाना। सामने से लोग गुजर रहे हैं, गाड़ियाँ गुजर रही हैं। चुपचाप देखते रहना। निष्पक्ष। तुम्हारे मन में यह न हो कि अरे यह सुन्दर व्यक्ति गुजरा। काश यह थोड़ी देर रुक जाए। यह भिखमंगा कहाँ से आ गया आगे बढ़े। यह खूबसूरत कार आ रही है। काश ऐसी मेरे पास हो। नहीं, तुम्हारे भीतर कुछ भी न हो। चाहे सुन्दर व्यक्ति गुजरे, चाहे कुरूप, चाहे खटारा ऑटो रिक्शा गुजरे, चाहे मर्सडीज कार। तुम चुपचाप दृष्टा बने देखते रहना। चाहे भैंस गुजरे, चाहे गधा। तुम्हें कुछ लेना-देना नहीं। गुजरने वालों को गुजरने दो। तुम कोई निर्णय न लो। तुम यह न कहो कि यह गधा बीच में कहाँ से आ गया। सड़क है सब लोग गुजरेंगे। तुम चुपचाप खड़े देखते रहो। कभी पाँच मिनट यह प्रयोग करना। फिर मन के साथ भी इसी प्रयोग को करना। मन के भीतर काफी कुछ गुजर रहा है। कभी कुछ विचार आता है, कभी कोई भावना आती है, कभी कुछ, कभी कुछ।

तुम चुपचाप देखते रहो, तुम कुछ भी न करो और अचानक तुम पाओगे कि एक नए बिन्दु का उदय हुआ। तुम मन के साक्षी, तुम मन के द्रष्टा बने और तब तुम मन के स्वामी बन जाते हो। तुम मन के मालिक बन जाते हो। अभी तुम मन के गुलाम हो। मन के गुलाम का अर्थ– मन में जो भी कुछ गुजरता है, तुम उससे प्रभावित हो जाते हो। तुम उसके पक्ष या विपक्ष में पड़ जाते हो। तुम किसी चीज को हटाने की कोशिश करते हो। किसी चीज को आकर्षित करने की कोशिश करते हो। तुम उलझन में फँस जाते हो। काश, तुम निष्पक्ष होकर, बिना किसी निर्णय के शांत देखते रहो तो एक अद्भुत घटना घटेगी। तुम्हें एक नये तत्व का पता चलेगा कि मन एक दृश्य है और मैं उसका द्रष्टा हूँ और यहीं से जीत शुरू होती है। तुम मन के पार उठ गए। तुम मन से ऊपर चले गए। फिर मन तुम्हारा मालिक नहीं रह जाता। तुम उसके मालिक बन जाते हो। बड़ी सरल तरकीब है। सारे ध्यान की विधियों का सार सूत्र है द्रष्टा भाव, साक्षी भाव।

प्रश्न- एक मित्र ने पूछा है कि अगर जीवन में सब कुछ निश्चित है, तो फिर कर्म करने का क्या अभिप्राय है?

सीधी सी बात है फिर कर्म करना भी निश्चित होगा। प्रश्न पूछने के पहले जरा सोच तो लिया करो क्या पूछ रहे हो।

प्रश्न- एक मित्र ने पूछा है कि भगवान की वास्तविकता क्या है?क्या भगवान जैसी कोई चीज है?

मैं कोई उत्तर न दूँगा। क्योंकि मेरा उत्तर आपके लिए एक अन्धविश्वास बन जाएगा। अगर मैं कहूँ ईश्वर है या मैं कहूँ ईश्वर नहीं है, इन दोनों ही स्थितियों में आप मेरा उधार उत्तर पकड़ लेंगे। ये उधार उत्तर किसी काम न

आएंगे। सवाल यह नहीं है कि ईश्वर है या नहीं और दूसरे का उत्तर कभी भी आपको सन्तोष प्रदान न करेगा। मुझे भूख लगती है, मैं भोजन करता हूँ। तब मेरा पेट भरता है। मेरे भोजन करने से आपका पेट नहीं भरता। मेरे पानी पीने से आपकी प्यास नहीं बुझती और पानी के बारे में कितना ही समझाऊँ। उससे आपकी प्यास नहीं बुझेगी। ईश्वर के बारे में मेरा कुछ भी कहना कोई मायने नहीं रखता। आप पहले ही बहुत कुछ सुन-समझ चुके हैं। इतना तो सुना है आपने बचपन से आज तक, जब वह काम नहीं आया तो मैं घन्टे भर के लिए आया हूँ; मेरी बात किस काम की होगी। आप चालीस साल से पचास साल से कुछ तो सुनते आ रहे हैं ईश्वर के बारे में। जब पचास साल काम न आए। मेरे पचास मिनट क्या काम आएंगे। एक बात पक्की है, दूसरों का अनुभव हमारा अनुभव नहीं बनता। अगर हमें भूख है हमें स्वयं ही भोजन की तलाश करनी होगी। अगर हमें प्यास है हम खुद ही पानी को ढूढें और खुद ही पानी को पीएं तब जाकर प्यास बुझेगी। मैं आपसे नहीं कहता कि

ईश्वर है या नहीं। मैं तो आपसे कहता हूँ कि खोज करो, खोजी बनो। संत कबीरदास कहते हैं-

जिन खोजा, तिन पाइयां।

जो खोजते हैं वे पाते हैं। आप क्या पाओगे, मैं कह नहीं सकता। हो सकता है आप पाओ कि ईश्वर है। हो सकता है आप पाओ कि ईश्वर नहीं है। खोजने से ही पता चलेगा। किसी की बात मानना मत। जैसे मैंने पहले कहा धर्म के मामले में सबसे बड़ा अटकाव और बाधा आदर्श है। उसी प्रकार दूसरी बात कहना चाहता हूँ धर्म के मामले में सबसे बड़ी बाधा पूर्वाग्रह से भरी हुई धारणा। हम पहले ही मान लेते हैं कि कुछ ऐसा है। आधी दुनिया आस्तिक है वे मानते हैं ईश्वर है। आधी दुनिया नास्तिक है वे मानते हैं ईश्वर नहीं है। लेकिन इन आस्तिकों और नास्तिकों के जीवन में कोई भेद नहीं है। वे आस्तिक भी वैसा ही बेईमान है, जैसा नास्तिक। वे आस्तिक भी वैसा ही अपराध करता है जैसा नास्तिक। उन आस्तिकों को भी वैसा ही क्रोध आता है जैसा नास्तिकों को। इनकी आस्तिकता, नास्तिकता की कीमत

क्या है?वह जो आदमी पूजा करता है। उसके अन्दर भी वैसा ही लोभ है, वैसी ही कामवासना है, वैसी ही ईर्ष्या है; जैसी उसके मन में जो पूजा प्रार्थना नहीं करता। इनकी ईश्वर की धारणा से इनके जीवन में कोई भी परिवर्तन नहीं हुआ। ये धारणाएं दो कौड़ी की भी नहीं। इसलिए मैं जानबूझ कर कोई उत्तर न दूँगा क्योंकि मेरी कही बात आपके लिए सिर्फ धारणा होगी। एक अन्धविश्वास होगी। अन्धविश्वास काम नहीं आएंगे; आपको स्वयं खोजना होगा। अगर ईश्वर होगा तो जरूर मिल जाएगा। नहीं होगा तो इस तथ्य का उद्घाटन होगा। तथ्य का पता चलेगा। जो आपको पता चलेगा वह आपके जीवन में क्रान्ति लाएगा। इसलिए कृपया दूसरों से न पूछें। जैसा मैंने कहा दूसरों को आदर्श न बनाएं। दूसरी बात कहना चाहता हूँ कि दूसरों के उधार उत्तर भी कभी काम नहीं आते।

अभी-अभी मैंने आपको हर्मन हैश की कहानी कही सिद्धार्थ की। सिद्धार्थ लौट गया गौतम बुद्ध के पास से। उसने स्वयं खोजा और पाया। तुम भी खोजो।

मुझे नहीं पता भगवान है कि नहीं। अगर मुझे पता है, वह मेरा व्यक्तिगत अनुभव होगा। वह आपके काम नहीं आ सकेगा। लैला मजनू ने बहुत प्रेम किया था लेकिन उनका प्रेम आपके काम नहीं आता। आपको स्वयं ही प्रेम करना होता है। जीवन का कोई भी कीमती अनुभव हमें स्वयं ही जानना होता है। किताब पढ़ कर हम नहीं समझ सकते कि प्रेम क्या होता है?कितने ही बड़े-बड़े कवियों ने सुन्दर-सुन्दर कविताएं लिखी हैं प्रेम के ऊपर। क्या उन कविताओं को पढ़ कर प्रेम का कोई अनुभव हो सकता है? नहीं हो सकता। अनुभव से ही गुजरना होगा। तैरने के ऊपर किताबें लिखी हों; पढ़ लें आप, उससे तैरना नहीं सीख पाएंगे। स्वयं ही तैरना होगा तभी तैरना सीख पाएंगे। किताब पढ़ कर तैरना कहाँ सीखोगे? नदी में ही उतरना पड़ेगा। ठीक इसी प्रकार दूसरों के कोई उत्तर काम के नहीं। कम से कम जीवन के जो महत्वपूर्ण अनुभव हैं, आन्तरिक अनुभव हैं; उसमें तो बिल्कुल काम के नहीं। बाहर के जगत में काम के हो सकते हैं। न्यूटन ने ग्रेविटेशन का नियम खोज लिया; अब हमको

दुबारा खोजने की जरूरत नहीं है। वह बाहर के जगत की एक घटना है। वह कोई आन्तरिक अनुभव नहीं है। हम मिडिल स्कूल में, हाई स्कूल में न्यूटन का गुरुत्वाकर्षण का सिद्धान्त पढ़ लेते हैं और हम समझ जाते हैं कि न्यूटन को खोजने में सालों लगे थे। और शिक्षक ने आधे घण्टे में, एक घण्टे में समझा दिया। न्यूटन की जिन्दगी भर की मेहनत एक घन्टे में हम समझ गए बात खत्म हो गई। विज्ञान बाहर से सीखा जा सकता है। धर्म बाहर से नहीं सीखा जा सकता। धर्म आन्तरिक अनुभव है। विज्ञान बाहर के जगत की घटना है। गणित बाहर से सीख सकते हो, भाषा बाहर से सीख सकते हो, व्याकरण सीख सकते हो। सब चीजें बाहर जो स्कूल कॉलेज में सिखाई जाती हैं, वे बाहर के जगत की घटनाएँ हैं। आन्तरिक जगत में कुछ भी नहीं सिखा जा सकता। कोई आपको प्रेम नहीं सीखा सकता, कोई आपको प्रार्थना नहीं सिखा सकता। कोई आपको परमात्मा नहीं सिखा सकता। कोई आपको मन की शांति क्या होती है यह नहीं बता सकता?करूणा क्या होती

है?इसकी कोई ट्रेनिंग नहीं हो सकती प्रशिक्षण। वह आपके भीतर से ही उमगे तो उमगे। न उमगे तो न उमगे। प्रेम हवा का झौंका है। खिड़की में से आ जाए तो आ जाए; न आए तो न आए। उस पर कोई जोर जबरदस्ती नहीं हो सकती। बस हम इतना ही कर सकते हैं कि खिड़की खोल कर रखें। वही मैं आपसे कह रहा हूँ परमात्मा के प्रति खिड़की खोल कर रखें खोजी बनें। खोज भरी आँखों से भीतर झाँके, देखें। देखें ईश्वर है कि नहीं। अगर मिल जाए तो वह आपका अनुभव होगा। नहीं मिले तो वह भी आपका अनुभव होगा। यह प्रामाणिक अथेन्टिक होगा उसकी कोई कीमत है। दूसरों के सुने-सुनाए उत्तर किताबों में पढ़े उत्तर काम न आएंगे।

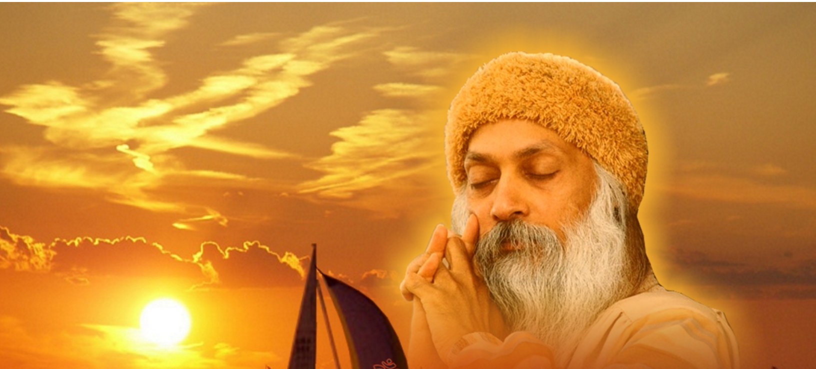

प्रश्न- एक मित्र ने पूछा है कि मेरे पास जिन्दगी में बाहर से सबकुछ मिला है धन-दौलत है, बड़ा मकान है, घर-गृहस्थी है। फिर भी संतोष नहीं है। जिन्दगी में सन्तुष्टि कैसे मिले?

सुनो यह गीत। शायद तुम्हारे जैसे ही किसी व्यक्ति की जिन्दगी पर है।

'ऊपर ऊपर खुशहाल जिन्दगी,
भीतर बिल्कुल कंगाल जिन्दगी।
अधरों पर मुस्कान, हृदय में घाव,
झूठ का जाल जिन्दगी।
बचपन, यौवन और बुढ़ापा,
तीन ऋतु की जिन्दगी।
झूले से लेकर अर्थी तक,
भेड़ों जैसी चाल जिन्दगी।

कहीं पर हमला, कहीं सुरक्षा,
तीर बनी कभी ढ़ाल जिन्दगी।
मकड़ी फँसी अपने ही जाल में,
वाह गजब जंजाल जिन्दगी।
भाग-दौड़, स्पर्धा, हिंसा,
झगड़ा झाँसा बवाल जिन्दगी।
बहुत रफु, पैबन्द लगाए,
रही मगर फटे हाल जिन्दगी।
बाल की खाल उधेड़ी फिर भी,
उत्तर रहित सवाल जिन्दगी।
आँधी तूफाँ भुचाल जिन्दगी,
अन्त काल को गाल जिन्दगी।
अभी जली की अभी बुझी बस,
क्षणभंगुर मशाल जिन्दगी।
बड़ी हाल-बेहाल जिन्दगी,
आँसू भरा रूमाल जिन्दगी।

सामान्यतः हमारी जिन्दगी की कहानी यही है। ऊपर–ऊपर हमने बड़ा इन्तजाम कर लिया। बड़ी सफलताएँ हासिल कर लीं और भीतर हम बिल्कुल दरिद्र हैं। बाहर की हमारी सम्पन्नता भीतर की विपन्नता को मिटा नहीं पाती। बाहर की सम्पदा भीतर की विपदा को समाप्त नहीं कर पाती। बल्कि उल्टा होता है। बाहर जब सम्पदा हो तो भीतर की विपदा और भी कॉन्ट्रास्ट में उभर कर दिखाई देती है। गरीब आदमी को तो लगता है कि कभी अमीर हो जाऊँगा फिर बड़े मजे से रहूँगा। अमीर आदमी की बड़ी मुसीबत अब उसकी कोई आशा भी नहीं। जो अमीरी हो सकती है, वह हो गई और भीतर कोई शान्ति नहीं, कोई चैन नहीं। इसलिए गरीब आदमी तो फिर भी आशा में जी लेता है। अमीर आदमी की आशा नष्ट हो जाती है। लेकिन इसको दुर्भाग्य मत समझना। यही सौभाग्य का क्षण है। जब बाहर तुम्हारे पास सब कुछ है। तब वहाँ से भीतर की खोज शुरू हो सकती है। बाहर तो तुमने सब पा कर देख लिया। हाथ

खाली के खाली हैं। अब जरा भीतर तलाश करो। अपने भीतर मुड़ो। अन्तर्यात्रा पर चलो। एक आश्चर्य की बात भारत जब सोने की चिड़िया था, तब भारत आध्यात्मिक रूप से भी बड़े शिखरों पर चढ़ा था। आज पश्चिम के देश सम्पन्नता की ऊँचाइयों पर हैं और इसलिए पश्चिम के देशों में धर्म की बड़ी प्यास पैदा हो रही है। भारत के बच्चे विज्ञान सीखने के पीछे पड़े हैं। उनको कम्पयूटर साइन्टिस्ट बनना है, उनको अमेरिका जाना है। अमेरिकन लोग अध्यात्म की खोज करने के लिए भारत में आ रहे हैं। आज स्थिति पलट गई। केवल सम्पन्न समाज ही धार्मिक समाज हो सकता है। क्योंकि सम्पन्नता के कॉन्ट्रास्ट में उस पृष्ठभूमि में यह स्पष्ट हो जाता है कि सम्पन्नता पाकर भी कुछ नहीं मिलता। ठीक बाहर सब सुन्दर हो गया। लेकिन भीतर कुरूपता नष्ट नहीं हुई। उसके लिए कुछ और करना होगा। इसलिए जोरबा दी बुद्धा की शिक्षा ओशो की बड़ी महत्वपूर्ण है। बुद्ध स्वयं भी उन्नतीस साल की उमर तक जोरबा की जिन्दगी ही

जिए थे। राजकुमार थे। बाहर की सम्पन्नता सुन्दर है उसका उपयोग करो। क्योंकि उसके बाद ही ख्याल में आता है कि भीतर भी कुछ खोजना है। इस परिस्थिति का सदुपयोग कर लो।

प्रश्न- आज्ञा चक्र पर और सहस्रार पर ऊर्जा इकट्ठी होने से आनन्द में कुछ कमी महसूस हो रही है और हल्का सा तनाव महसूस हो रहा है क्या करूँ?

आपसे निवेदन है नाभि चक्र पर ध्यान को केन्द्रित करें। धीमी गहरी साँस लें। कभी छोटा सा अन्तर्कुम्भक कभी रोक लो श्वास को दो-चार मिनट और अपना ध्यान पेट पर लगाएं। श्वास के साथ उठते गिरते नाभि केन्द्र का अहसास करें। तब आप ज्यादा प्रसन्न, शान्त और आनन्दित महसूस करेंगे।

Crown Chakra
SAHASRARA
Third Eye Chakra
AJNA
Throat Chakra
VISHUDDHI
Heart Chakra
ANAHATA
Solar Plexus Chakra
MANIPURA
Sacral Chakra
SVADHISHTHANA
Root Chakra
MULADHARA
7
MAIN
CHAKRAS
for beginners

प्रश्न- एक मित्र ने पूछा है कि कभी-कभी बड़ी मस्ती और आनन्द का अनुभव होता है, किन्तु भय भी लगता है। ऐसा क्यों?

महत्वपूर्ण सवाल है। प्रत्येक साधक के जीवन में कभी न कभी ऐसा अनुभव होगा। जहाँ आनन्द और भय एक साथ महसूस होंगे। यह इस बात का प्रमाण है कि सचमुच में आनन्द में गहराई मिल रही है। अभी हम बात कर रहे थे तैरना सीखने की। जब कोई तैरना सीखने जाता है तो उथले पानी में घुटने तक के पानी में तैरना सीखने जाता है। वहाँ उसे डर नहीं लगता। क्योंकि पता है डूबने लगे खड़े हो जाएंगे। डूबने का कोई डर नहीं।

फिर थोड़ी हिम्मत पड़ती है। कमर भर पानी में जाते हैं। फिर वहाँ हाथ–पैर चलाना सीखते हैं। अभी भी डर नहीं लगता। क्योंकि पता है कमर तक पानी है। तीन फुट डूबने का कोई सवाल नहीं है। खड़े हो जाएंगे। फिर वहाँ जब सीख जाते हैं थोड़ा और आत्मविश्वास फिर आगे बढ़ते हैं। जब गले–गले पानी में जाने लगते हैं वहाँ से थोड़ा भय पकड़ता है। आगे और गहरा पानी है। अब अगर पैर फिसल गया या डूबकी लगी तो फिर खड़े नहीं हो पाएंगे। अब डूबने का खतरा पैदा हुआ। ठीक इसी प्रकार ध्यान की साधना में जब हम मन के पार जाने लगते हैं। एक सीमा तक तो हमें पता है कि हमारा वही पुराना मन मौजूद है। कभी भी हम पैर टिकाके खड़े हो जाएंगे। वापिस किनारे लौट आएंगे। लेकिन एक समय ऐसा आता है जब हम मन की सीमा को क्रॉस करने लगे। मन के पार उस सीमा रेखा पर पहुँच गए। वहाँ से भय पकड़ता है। अब अज्ञात में प्रवेश हो रहा है। पता नहीं क्या होगा?जाना–पहचाना ज्ञात लोक छूट रहा है।

किनारे से बहुत दूर आए। अब अंजान हैं आगे। अज्ञात से हम भयभीत होते हैं। इसलिए इसको मैं एक अच्छा लक्षण समझता हूँ भय लगना। आनन्द भी आ रहा और भय भी लग रहा है। इसका अर्थ है अब आप मन के किनारे से दूर आ गए। अब अमन की दशा में प्रवेश होने का अवसर आ रहा है। अब हिम्मत करो अगला कदम और उठाओ। भय की कोई जरूरत नहीं। आगे और आनन्द ही आनन्द है। परम आनन्द है।

प्रश्न- एक मित्र ने पूछा है इंसान की मृत्यु के बाद उनको मोक्ष प्राप्त करवाने के लिए उनका पुत्र क्या करे?

कुछ न करो आप अपना इंतजाम करो। वे जो सज्जन चले गए, वे अपना इंतजाम न कर पाए। उनके जाने के बाद आप उनके लिए कुछ नहीं कर सकते। प्रत्येक व्यक्ति स्वयं के जीवन के लिए जिम्मेवार है। यहाँ कोई

किसी की मदद नहीं कर सकता। कोई पुत्र पिता की भी मदद नहीं कर सकता। ये सब झूठी सात्वनाएँ हैं कि कुछ क्रिया काण्ड करने से पिता को मोक्ष प्राप्त हो जाएगा। उन्होंने जिन्दगी भर जो किया है उसका फल उन्हें मिलेगा। आपके करने से कुछ भी न होगा। आप जो कर रहे हो उसका फल आपको मिलेगा। संसार में वसीयत होती है, पिता अपनी जायदाद पुत्र के नाम लिख गए। अध्यात्म के जगत् में कोई वसीयतदारी नहीं होती। वहाँ अपनी-अपनी कमाई खुद ही करनी पड़ती है। आपके पिता अगर जीते जी मुक्त हो गए, तो ही मृत्यु के बाद कोई मुक्ति है। वर्ना कोई मुक्ति नहीं। फिर वापिस लौट कर आना होगा। मोक्ष इतना सस्ता नहीं है कि कुछ छोटे से क्रिया काण्ड कर दिए कि पूजा पाठ करवा दिया। कौओं को भोजन करवा दिया और श्राद्ध करवा दिया और पण्डितों को दान दे दिया और पिता जी का मोक्ष हो जाएगा। अगर ऐसा हो गया तब तो हमने मोक्ष को भी खरीद लिया। कुछ दस-पाँच हजार रूपये खर्च करने से अगर मोक्ष मिलता है। ये तो बड़ी खरीदारी हो गई। फिर

तो साधना की कोई जरूरत नहीं। थोड़े पैसा कमाके एक ट्रस्ट बनाकर छोड़ जाओ कि हमारे मरने के बाद ऐसा-ऐसा कर देना। बस मुक्ति मिल जाएगी। दस-बीस हजार में तुम समझते हो मोक्ष मिल जाएगा। जमीन की कीमत कितनी है। बम्बई में बीस हजार रूपये इसक्वायर फुट जमीन चल रही है और तुम सोच रहे हो कि दस हजार में तुम स्वर्ग पर कब्जा कर लोगे। बड़ी सस्ती टैकनीक निकाली। उसमें भी खुद नहीं करोगे उसे भी पुत्र करेगा। नहीं धर्म बिल्कुल नकद है। स्वयं ही स्वयं के लिए कुछ किया जा सकता है, दूसरे के लिए नहीं। इसलिए व्यर्थ इस प्रकार की बातों में न उलझें।

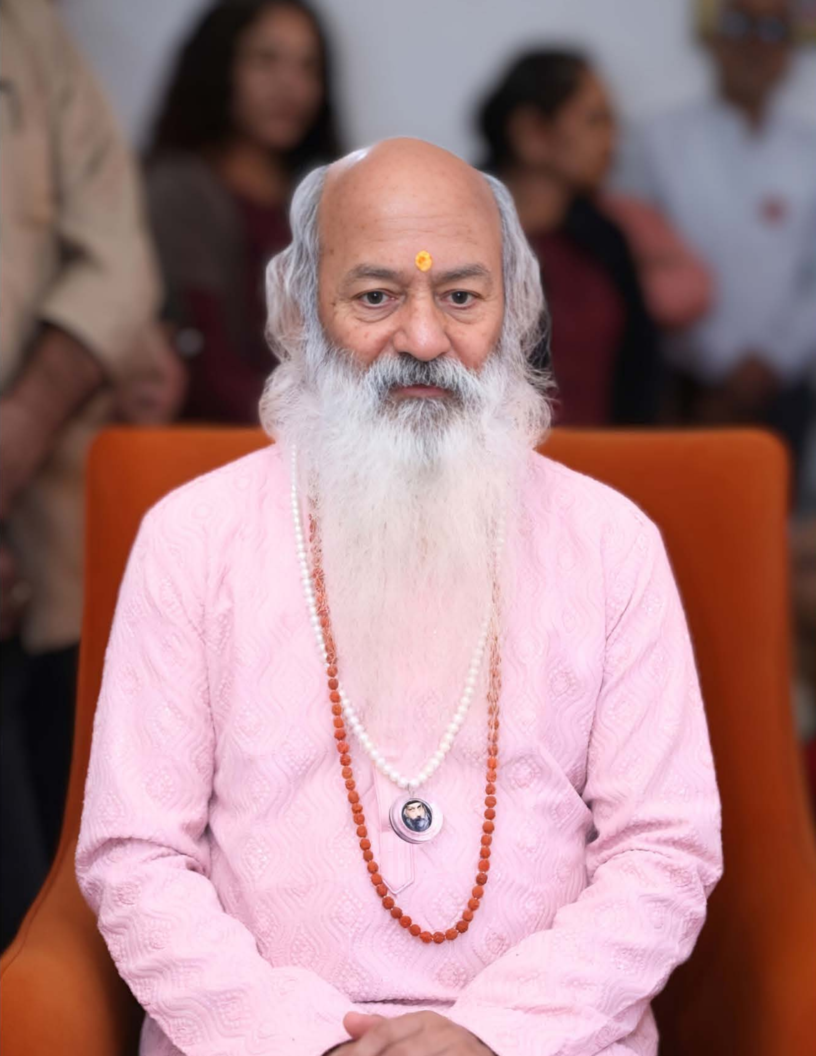

प्रश्न- एक मित्र ने पूछा है कि मैंने जिन्दगी में प्रेम लेने और देने की बहुत कोशिश की। किन्तु हमेशा मैं ठुकराया गया या मुझे धोखा दिया गया। ऐसा क्यों?

संसार का नियम ऐसा ही है। अगर यहाँ तुम्हारी प्रेम की चाहत पूरी हो जाए तो फिर परमात्मा को कौन प्रेम करेगा। यह संसार एक पाठशाला है। यहाँ हमारे भीतर अभिप्सा तो है, चाहत तो है, इच्छाएँ हैं, लेकिन पूरी कोई नहीं होती। तुम कितना ही धन कमा लो भीतर की निर्धनता नहीं मिटती। तुम कितना ही प्रेम सम्बन्ध बना लो, कोई प्रेम तृप्ति नहीं देता। संसार में प्यास है, तृप्ति का कोई उपाय नहीं। लेकिन यह दुर्भाग्य नहीं, यह तो सौभाग्य है। तभी तो हम भीतर की तरफ मुड़ेंगे। भीतर की तरफ यात्रा करेंगे। किसी कवि ने लिखा है-

कहने को सभी अपने हैं मगर,
सहरा में हमारा कोई नहीं।
होठों पे खुशी के गुल हैं बहु,
खुशबू का बहारा कोई नहीं।
बाहर तो बड़ी रौनक है यहाँ,
सामान बहुत सुख सविधा के।
अन्दर तो मगर सुनसान है सब,
अपना सा बेचारा कोई नहीं।
रिश्तों से भरी इस दुनिया में,
हमदर्द यहाँ दिखते हैं सभी।
जब गौर किया मालूम हुआ,
सचमुच का सहारा कोई नहीं।
दामन ही नहीं हम थामें जिसे,
बस्ती ही नहीं देखने को यहाँ।
बेकार भ्रम में खोए रहे,
आनन्द का द्वारा कोई नहीं।
सब रस्ते हैं भटकाने के लिए,
अटकाने के बन्दोबस्त हैं सब
यहाँ प्यार की बातें होतीं मगर,
यहाँ प्यार का मारा कोई नहीं।

संसार में केवल झलक मिलती है बस। ऐसा लगता है बस अब मिला, अब मिला। मिलता कभी भी नहीं। जैसे क्षितिज दिखाई पड़ता न! लगता है कि तीन चार किलोमीटर दूर होगा क्षितिज जहाँ जमीन और आसमान मिलते हैं। बस अभी पा लेंगे थोड़ी देर में। तुम कितना ही चलो, कितना ही चलो। क्षितिज हमेशा तीन-चार किलोमीटर दूर ही रहता है। मिलता कभी नहीं। दिखाई पड़ता है। संसार में सभी चीजों के आभास हैं, झलक है, मिलता कभी किसी को भी नहीं। बड़े-बड़े सिकन्दर और हिटलर को नहीं मिला। हम लोग तो साधारण लोग हैं। हमारी तो बात ही छोड़ दें। बड़े विश्व विजेता, राजा महाराजा, राष्ट्रपति, प्रधानमन्त्री उनको कुछ न मिला। सिवाय दुःख और फ्रस्ट्रेशन के कुछ हाथ नहीं आता। मरते समय पता चलता है कि सब व्यर्थ गया। न यहाँ प्रेम की आकांक्षा पूरी होती, न यहाँ सम्पत्ति की इच्छा पूरी होती, न यहाँ कोई शक्तिशाली हो

पाता। बस भ्रम में खोए रहते हैं। लगता है कि कुछ होने वाला है। बस इतना और हो जाए। बस वे क्षितिज वाला गणित बस दो-चार किलोमीटर और। अभी हाथ आ जाएगा। कभी किसी के हाथ नहीं आया। नहीं आ सकता।

तो प्यारे मित्रों आप से निवेदन करता हूँ। आपकी इच्छा बिल्कुल सही है। जिस दिशा में खोज रहे हैं, वह दिशा भ्रान्त है। पुराने साधु-महात्मा क्या कहते हैं?वे कहते हैं तुम्हारा प्रेम गलत। घर-गृहस्थी को छोड़ भागो। मैं आपसे कहता हूँ नहीं। प्रेम की चाहत बिल्कुल ठीक। लेकिन जहाँ तुम उसे पाने की कोशिश कर रहे हो। वहाँ नहीं मिलेगा। मिलेगा स्वयं के भीतर। अपनी दिशा बदलो। मैं नहीं कह रहा है कि सम्पत्ति की खोज में कुछ गलती है। बिल्कुल ठीक। सम्पत्ति की चाहत, आकांक्षा विराटता की इच्छा बिल्कुल सही है। लेकिन बाहर के जगत में तुम कभी भी असीम न हो सकोगे। पूरी दुनिया भी तुम्हारी हो जाए, फिर भी उसकी एक सीमा होगी। पृथ्वी है कितनी सी?इस विराट अस्तित्व में एक धूल के

कण के बराबर भी नहीं। मैंने सुना है सिकन्दर जब विश्व विजेता की यात्रा पर निकला था। डायजनीज नाम के एक युनानी फकीर ने उसको कहा कि सिकन्दर क्या तुम्हें ख्याल है कि एक ही पृथ्वी है बस, एक ही दुनिया है। जीतने के बाद फिर क्या करोगे?दूसरी तो कोई दुनिया है ही नहीं और कहते हैं कि सिकन्दर यह सोच कर ही उदास हो गया। एक ही दुनिया है पूरी जीत ली फिर। फिर क्या करोगे?फिर तो बैठ कर मक्खी मारो और क्या करोगे?आखिर दुनिया की भी सीमा है। लेकिन मैं आपसे कह रहा हूँ कि वह जो सम्पत्ति और शक्ति की आकांक्षा है, वह विराट होने की आकांक्षा है। आकांक्षा में कोई भूल नहीं है। लेकिन इस दुनिया में वह पूरी नहीं होगी। वह होगी स्वयं के भीतर पूरी। वहाँ की शून्यता विराट है। शून्यता ही असीम हो सकती है। चीजों की तो सीमा होगी। बाहर के प्रेम पात्र सीमित ही होंगे। अगर तुम चाहते हो अमर और अनन्त प्रेम, सचमुच में अमर प्रेम वह केवल भीतर हो सकता है। वह बाहर नहीं हो सकता। बाहर तो सब प्रेम मिट जाएगें। फिल्मों में गीत

रहते हैं अमर प्रेम के। बस वे फिल्मों में रहते हैं। वे कवियों की कल्पनाएँ हैं। वे कभी पूरे नहीं होते, किसी के पूरे नहीं हुए। बाहर पूरा हो नहीं सकता। हम जिसे प्रेम कर रहे हैं, वह स्वयं मरणधर्मा, हम खुद मरणधर्मा। बाहर कैसे अमर प्रेम होगा। लेकिन चाहत में भूल नहीं है। तो फर्क याद रखना। पुराने साधु महात्मा समझा रहे थे कि तुम जिसे चाह रहे हो, उसे छोड़ कर भागो। यह प्रेम की चाहत गलत है, मोह गलत है। मैं आपसे नहीं कहता कि मोह गलत है, कि प्रेम की चाह गलत है। मैं कह रहा हूँ सही जगह खोजो। तुम्हारी हालत ऐसी है कि तुम जूते की दुकान पर पहुँच कर कह रहे हो कि गुलाबजामुन क्या भाव हैं?वह गुलाब जामुन की दुकान नहीं है। तुम कह रहे हो अच्छा छोड़ो गुलाबजामुन बर्फी का रेट बताओ?वह दुकानदार कह रहा है यहाँ जूते मिलेंगे। जूते के अलावा कुछ नहीं। ज्यादा बकबक की तो जूते पड़ेंगे। तुम कह रहे हो अच्छा छोड़ो रसमलाई का भाव?तुम गलत जगह जा रहे हो। मैं आपसे कह रहा हूँ कि आपकी चाहत ठीक है। जरूर रसमलाई कहीं है।

हलवाई की दुकान खोजनी होगी। आप गलत दुकान पर सामान लेने पहुँच गए। अपने भीतर मुड़ना होगा वहाँ रस की धार बह रही है। उपनिषद के ऋषि कहते हैं– 'रसो वै सः।' परम आनन्द, परम रस हमारे स्वयं के भीतर है। उसे पाने की अभिप्सा या उसे पाने की साधना का नाम ही अध्यात्म या धर्म है ओशो की दृष्टि में।

प्यारे मित्रां, अपनी बात को यहीं समाप्त करता हूँ। जिन मित्रों को ओशो के प्रति प्रेम और शिष्वत्व का भाव जन्मता हो, जो इस साधना पथ पर चलने के लिए राजी हों, उन मित्रों को निमंत्रण देता हूँ माला दीक्षा हेतु। धन्यवाद।